‘जिन्दगी 50-50’ में किन्नर का समाज में स्थान और उनकी संघर्षशीलता ओनम साहू*

*विद्यार्थी, एम. ए. हिन्दी साहित्य, बस्तर विश्वविद्यालय, जगदलपुर
(छत्तीसगढ़)

‘ईश्वर ने बनाया हम सबको साथ
ना भेदभाव मनुष्य पशु पक्षी सब
है आत्मा सब शरीर निवास
तब उसी पर सवाल क्यों?
वह किन्नर है क्यों?’

भगवंत अनमोल का ‘जिन्दगी 50-50’ उपन्यास किन्नर जीवन का यथार्थ चित्रण करता है। स्त्री, दलित, आदिवासी विमर्शों के दौरान यह भाग उपेक्षित रहा। लेकिन इक्कीसवीं शताब्दी में समाज के इस विषय को साहित्यिक विमर्शों में स्थान मिलने लगा है। उनका यह उपन्यास इसी विमर्श को लेकर साहित्य जगत में आता है। इसमें किन्नर जीवन के प्रति सामाजिक धारणा, लोगों के व्यवहार, उनके प्रति बदलती मानसिकता, पारिवारिक परवरिश आदि अनेक पक्षों को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। उनके उपन्यास की रचनाशीलता के विषय में डॉ. कविश्री जायसवाल लिखती हैं कि- “जिन्दगी 50-50 में लेखक की रचनात्मक कला में लेखन की सहज गति समाई है। जिसमें शामिल है चिंतन, मनन, प्यार और प्रायश्चित। भगवंत अनमोल अपनी भाव-भाषा से अपने विचारों के प्रारूप को रचने में समर्थ हैं। अपनी निष्ठावान सोच के अंकुरित शब्द सुमन में किन्नर जीवन के संघर्षमय जीवन को रेखांकित करते हुए वे हमसे रू-ब-रू होते हैं।”¹ देखा जाए तो, आज भी अधिकांश मनुष्य किन्नरों के जीवन से अनभिज्ञ हैं, या कहें तो अनभिज्ञ रहना चाहते हैं। आये दिन उन्हें बसों और ट्रेनों में भीख मांगते देखा जा सकता है। मन सोचने में मजबूर हो जाता है कि इतने हट्टे-कट्टे

इंसान कुछ पैसों के लिए बिना कार्य किए लोगों को तंग करते रहते हैं। वह कौन-सी मजबूरी है कि उन्हें स्त्रियों की तरह सज सँवरकर गली-गली भीख मांगने के लिए मजबूर होना पड़ता है? अतीत से वर्तमान तक दुनिया इन्हें हेय दृष्टि से देखती चली आ रही है। समाज में अतीत पर आधारित मान्यताएँ, अधिक हैं ये मान्यताएँ आज भी इंसान के मन में, एक इंसान के लिए ही गलत धारणा बनाए रखी हैं! समाज की ऐसी दोहरी मानसिकता और व्यवहार के कारण ही किन्नरों को नरकीय जीवन जीने के लिए विवश होना पड़ रहा है। इसी के चलते किन्नर वर्ग आज भी समाज में सम्मान के लिए संघर्षरत है।

समाज स्त्री और पुरुष दो रूपों में बंटा हुआ है। इसके अतिरिक्त समाज में तीसरा वर्ग भी है। जो न स्त्री है और न पुरुष जो समाज के उपेक्षित व्यवहार का शिकार है। जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाये, तो समाज उन्हें किन्नर नाम से सम्बोधित करता है। शरीर पुरुष का होकर स्वभाव स्त्री का हो अर्थात् उनकी भावनाएं जरूरतें सब स्त्री की। एक बहुत कष्टजनक स्थिति जिससे उन्हें अपने जीवन में सामना करना पड़ता है। अपनी पहचान की बातें तो दूर एक सामान्य मनुष्य की तरह जीवन जीने और समाज में उचित स्थान पाने के लिए जीवनपर्यन्त संघर्षरत हैं। घृणा और उपेक्षा का दंश झेलते हुए भी अपने चेहरे पर झूठी मुस्कान बिखेरना किन्नर जीवन की विवशता बन जाती है। वह जिन्दा तो है, पर निरंतर समाज की उपेक्षा और तिरस्कार सहकर धीरे-धीरे अन्दर से उनकी आत्मा बहुत दुखी है। 15 अप्रैल 2014 का दिन खुशी का दिन था, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने हिजड़ों को तीसरे लिंग के रूप में कानूनी मान्यता प्रदान की। कानून लागू करने के साथ-साथ उन्हें उनके मूल अधिकारों से उनका परिचय कराया। कानून का बन जाना महत्वपूर्ण तो है, पर उतना ही महत्वपूर्ण है समाज की सोच और मानसिकता में परिवर्तन का। जरूरत है, समाज की जड़ता और संकीर्णता में सुधार की जिससे किन्नर वर्ग के अभिशप्त जीवन में सुधार हो सके। जिस समाज के लिए किन्नर वर्ग हमेशा से उपेक्षित और उपहास का विषय रहा हो, उनकी मानसिकता में जल्द परिवर्तन कैसे हो सकता है? पर ऐसा भी क्यों कि उसे सामान्य इंसान का अधिकार समाज को स्वीकार नहीं। बचपन से उसे माँ की ममता और पिता का प्यार, मार्गदर्शन, परिवार,

शिक्षा आदि से दूर ऐसे पारिस्थितियों में बेसहारा छोड़ दिया जाता है। जहां उन्हें कई मानसिक, शारीरिक, सामाजिक दुर्भावनाओं और जिल्लतों का सामना करना पड़ता है। जिन्दगी यह स्वीकार करने में गुजर जाती है कि वे किन्नर हैं और इंसानी भावनाओं से युक्त समानता की उम्मीद करते हैं। अर्ध-पुरुष और अर्ध-स्त्री होने की कश्मकश में जीवन भर गाली बनकर समाज द्वारा उपेक्षित किये जाते रहते हैं।

परिवार में किन्नर बच्चों का जन्म अभिशाप बन जाता है। सदस्य अपने ऐसे बच्चों को समाज से छिपाते हैं। क्योंकि पहचान प्रकट होने पर पिता के पुरुषत्व पर संदेह होने लगता है। परिवार, समाज में सम्मान खोने लगता है और अपनी इज्जत के लिए वे अपने ही किन्नर बच्चों को त्याग देते हैं। इस तरह उन्हें समाज की दुर्व्यवहार से बचने के लिए अलग समुदाय में रहने के लिए बाध्य होना पड़ता है। अगर परिवार बच्चे की परवरिश करना चाहे तो, वे बच्चे के स्नेह और परवरिश करने के लिए स्वयं समाज से अलग हो जाते हैं। यह इसलिए की संकीर्ण मानसिकता वाली सामाजिक व्यवस्था इन्हें सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार नहीं देती है। इसलिए अपने असंवेदनशील व्यवहार से इन्हें बहिष्कृत कर अलग गांव और अलग समुदाय में रहने का दर्द दिया जाता है। जबकि प्रतिष्ठित जीवन का हकदार हर प्राणी है- पशु-पक्षी, स्त्री-पुरुष, उभयलिंगी-प्राणी आदि।

भगवंत अनमोल की जिन्दगी 50-50 उपन्यास किन्नरों की यथार्थता को पाठकों के सामने रखकर समाज की सच्चाइयों से परिचित कराता है। युवा साहित्यकार अपनी वास्तविक कहानी के द्वारा किन्नरों के दुख दर्द को पाठकों तक पहुंचाने का प्रयास करते हैं। लेखक समाज के उनके प्रति व्यवहारों से भलीभांति परिचित हैं, क्योंकि उनका छोटा भाई किन्नर है और उनका पुत्र सूर्य भी किन्नर है। जब अनमोल पिता बनता है और सूचना मिलती है कि- “आपके बेटे का शिशन अपरिपक्व है और उसके दोनो टेस्टिकल्स भी नहीं है।”² अनमोल इस बात से परिचित होने पर कि उसका बच्चा सामान्य नहीं है। बल्कि किन्नर है। उसके दिलो दिमाग में भूचाल आ जाता है। आंखों के सामने अंधेरा छा जाता है। सूर्या

के जन्म होने पर डॉक्टर जब उसको धीमी आवाज में कहता है। आपका बेटा कभी बाप नहीं बन पायेगा। वह बहुत व्यथित हो जाता है। सुनते ही वह मूकदर्शन बन जाता है। उसके दीमाग में फिजूल की बातें घूमने लगती हैं और डॉक्टर को टकटकी निगाहों से देखने लगता है। सोचता है कि ईश्वर ने उसके साथ भद्दा मजाक क्यों किया? अब वह समाज से कैसे लड़ेगा क्या वह सेक्स वर्कर बन जायेगा? ऐसे अनेक प्रश्न उसके सामने खड़े होने लगते हैं। अनमोल अपने परिवार के व्यवहार की चिंता करने लगता है कि परिवार से क्या कहेगा? परिवार के साथ-साथ समाज भी उसके साथ बुरा बर्ताव करेगा। वह इनका सामना किस तरह करेगा? अनमोल को अन्दर ही अन्दर ये बातें खाई जा रही थीं। यह पीड़ा पहले भी उसके जीवन में आ चुकी थीं। क्योंकि वह अपने किन्नर भाई हर्षा की दयनीय पारिस्थितियों से परिचित था। जन्म से अनमाले अपने भाई को रोते सिसकते घर, परिवार और समाज में प्रताड़ित और अपमानित देख 'अनमोल यह दृढ़ निश्चय करता है कि वह अपने बेटे को अधूरी जिन्दगी नहीं, बल्कि भरपूर जिन्दगी जीने के लिए हर तरह से सक्षम बनायेगा।' अनमोल की यह मनोगत दशा बहुत मार्मिक है। यह वैचारिक द्वन्द्व उसके स्वयं के परिवार से उतना नहीं है, जितना समाज के अपमानों का भय सता रहा है। परिवार से ज्यादा समाज ही व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करता है। समाज ही स्त्री, पुरुष और तीसरे जेंडर के साथ भेद-भाव पूर्ण व्यवहार तय करता है।

माँ और बच्चे का रिश्ता अनोखा होता है। हर माँ अपने बच्चे को स्नेह और प्यार करती है। उसके सामने उसकी सन्तान ही सबसे खूबसूरत होती है। लेकिन सन्तानों के व्यक्तित्व पर मात्र माता-पिता का ही प्रभाव नहीं होता है बल्कि बाहरी कारकों का गहन प्रभाव पड़ता है। ऐसे ही एक माँ की ममता और बाहरी वातावरण के प्रभाव का द्वन्द्व दिखाई पड़ता है। इस उपन्यास में हर्षा की माँ ऐसे ही विषम पारिस्थितियों से गुजर रही है। अपने पुत्र के जन्म पर जन्मोत्सव मनाना चाहती है किंतु, हर्षा के पिताजी को यह बिल्कुल पसंद नहीं है। क्योंकि, उनको डर है कि अगर यह सब समाज को पता चल गया कि उनका पुत्र हिजड़ा है, तो समाज उसका मजाक बनायेगा- “आज के बाद न्यौता का नाम न ले लियो। तुम किसके खातिर न्यौता देना चाहती हो? जो कुछ सालों बाद हमारी

हर जगह नाक कटायेगा, बेइज्जती करवायेगा? हर कोई इसे हिजड़ा हिजड़ा पुकारेगा और मुझे हिजड़े का बाप।”³ देखा जाए तो बाहरी परिवेश बच्चे के जीवन में बड़ा योगदान देता है। उसका बहुमुखी विकास तभी हो सकता है, जब वह विभिन्न उत्सवों, कष्टों, समस्याओं आदि से सामना करता है। लेकिन किन्नर बच्चे के लिए इसके विपरीत स्थितियाँ हैं। वह समाज में स्वतंत्र और बिना अवरोध के विचरण नहीं कर सकता है। यही कारण है कि ऐसे बच्चों के जन्म को उत्सव के रूप में नहीं मानाया जाता है। माँ के साथ-साथ पिताजी की मन की दशा व्याकुल प्रतीत होती है। क्योंकि उनका दूसरा बच्चा भी किन्नर पैदा होता है। जो इस समाज का हिस्सा नहीं बन सकता है। ऐसे ही शोक ग्रसित पिता के घर किन्नर समाज की कस्तूरी अपने साथियों के साथ आती है- “आपके यहां हमारे बिरादरी के भाई ने जन्म लिया है, उसे हमें दे दो, वही हमारा नेग है।”⁴ जन्म के अवसर को उत्सव के रूप में मानाया जाता है। लेकिन ऐसे बच्चे के जन्म को दुख का क्षण माना जाता है। किन्नर समाज, जन्मे ऐसे बच्चों को अपने समाज में शामिल करते हैं। यथासंभव शिक्षा, परवरिश, संस्कार आदि की व्यवस्था करने का प्रयास करते हैं। बाद में, ये बच्चे भी ट्रेनों, बस, मुख्यधारा के माने जाने वाले समाज के बीच जाकर भिक्षा माँगकर अपना जीवनयापन करते हैं। ऐसी स्थिति इस उपन्यास में बनती दिखाई पड़ रही है। जब किन्नर समाज हर्षा को अपने समाज का हिस्सा मानते हैं। और उसे उसके पिता से माँगते हैं, तो हर्षा के पिताजी उसे फटकार लगाते हैं- “मैं अपने बेटे को मार दूंगा पर तुम्हारे यहां पर कभी देने नहीं आऊंगा।”⁵ परन्तु पिताजी कस्तूरी की बातों से अत्यंत विचलित हो जाते हैं। और उन्हें समाज से झूठी प्रतिष्ठा का भय सताने लगती है, उनके मन में, जो उपाय सूझता है। वह बड़ा हृदयविदारक होता है- “अब तो बस एक ही रास्ता दिखत है, बस ससुरा का आज काम तमाम कर देब न रही बांस न बाजी बांसुरी। वह तुरंत आधी बीड़ी फेंककर तेज कदमों से चल दिए, मूष मार दवाई लेने।”⁶ मुख्य समाज के लोगों की यह सोच बहुत ही गलत है। प्राकृतिक रूप से असामान्य बच्चों को इस दुनिया का नहीं माना जाता है। अर्थात् उसको जीने का अधिकार नहीं है। मात्र प्रतिष्ठा की खातिर उनकी हत्या का विचार परिवार के

द्वारा किया जाता है। यहाँ भी ऐसा सोचने के लिए अनमोल को सामाजिक प्रतिष्ठा उकसा रही है।

हम अपनी सोच को समयानुसार परिवर्तित कर सकते हैं। पर समाज की सोच बहुत गहराई से जमी हुई है, जिसमें समय का प्रभाव भी न के बराबर होता है। खुद को बदलना संभव भी है। लेकिन समाज में अचानक परिवर्तन लाना संभव नहीं है। अनमोल अपने बेटे सूर्या के जन्म दिवस पर बड़े खुशी के साथ 5 स्टार होटल में पार्टी देता है, पार्टी के बीच कई तरह की बातें होती हैं- “बहुत बड़े दिलदार व्यक्ति हो आप अनमोल भाई, ऐसे लड़के के लिए कोई फाइव स्टार क्या घर में भी नहीं बुलाता।”⁷ यह सुनकर अनमोल को बहुत बुरा लगता है, फिर भी पार्टी खराब न हो ऐसी बात को नजरअंदाज कर देता है। लेकिन समाज की ऐसी मानसिकता से आसानी से मुक्ति असंभव है। कुछ बातें सुनकर व्यक्ति की नैतिकता का धैर्य टूट जाता है। जब उसी पार्टी के बीच आवज सुनाई पड़ती है- “हाँ अभी अनमोल भाई पार्टी दे रहे हैं, कुछ सालों के बाद उनका बेटा हिजड़ों की टोली में शामिल होकर ‘हाय-हाय’ करता भीख मांगता नजर आएगा।”⁸ इस तरह के उलाहनों से साधारण व्यक्ति का भी संतुलन बिगड़ जाता है। और अपनी ही सन्तानों में विभेद करने को मजबूर हो जाता है।

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। क्योंकि साहित्य में सामाजिक मुद्दों को शामिल किया जाता है। ‘जिन्दगी 50-50’ उपन्यास किन्नर जीवन की यथार्थ समस्याओं को पाठक के सामने रखता है। साथ ही पीढ़ियों के अन्तराल में नई और पुरानी पीढ़ियों के बदलाव को भी दर्शाता है। उपन्यास में दो पीढ़ियाँ एक साथ चलती हैं। दोनों पीढ़ियों की स्थिति में अंतर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अतीत में जिस माँ ने किन्नर पुत्र (हर्षा) को जन्म दिया था, अनमोल उसका बड़ा भाई है। वर्तमान में उसी माँ का पौत्र (सूर्या) जन्म लेता है। पर पहली पीढ़ी के समय से बिल्कुल विपरीत अनमोल अपने पुत्र के जन्म पर खुश है, जहाँ अतीत में पिताजी समाज से भयभीत होकर अपने बच्चे को मार डालने को तत्पर हो जाते हैं। वहीं अनमोल अपने बेटे की अच्छी शिक्षा और उन्नति के लिए शुभकामनाएं देता है।

किन्नर जीवन से सम्बन्धित विविध घटनाओं के माध्यम से अनमोल ने उपन्यास को महत्त्वपूर्ण बनाया है। हिजड़ों की वेशभूषा, रहन-सहन, महत्त्वकांक्षा, जरूरतें और उनकी मनोदशा को लेखक ने अपने उपन्यास में स्थान दिया है। किन्नर बच्चों की जरूरतों से सम्बन्धित एक वर्णन इस प्रकार है- “हम, अम्मा का कपड़े पहनते हैं, जब मन करत है। कब पहिनते हो? जब बाबूजी चारा काटने चले जात हैं, अम्मा गोबर पाथने और तुम दोस्तन के संग क्रिकेट खेलने।”⁹ यह पहली पीढ़ी की बात थी। जहां हर्षा अपने भाई अनमोल को अपनी स्वभाविक वृत्तियों को बताता है। दूसरी पीढ़ी में अनमोल का पुत्र सूर्या, हर्षा के सामने अपनी मां का कपड़ा पहनकर लिपस्टिक लगाकर खुद को आईने में निहार रहा है। उसका यह व्यवहार अनमोल छिपकर देखता है और अपनी पत्नी के गुस्सा को शांत करने का प्रयास करता है। और वह सोचने लगता है कि जिस गलती को पिताजी ने हर्षा के साथ मारपीट और दुर्व्यवहार से किया है। उस गलती को वह नहीं दोहरायेगा।

कस्तूरी और हर्षा का मिलना इस उपन्यास में दिखाई पड़ता है। हर्षा कस्तूरी से कहती है- “कौनो तकलीफ नहीं। बस मिलये का मन रहे।” कौनो बात नहीं। तौहार बाप बढिया है कम से कम तुझे पढा लिखा रहा है। वर्ना हमारा बाप जनम लेते ही निकाल दिया था हमें घर से।”¹⁰ इस संवाद से पता चलता है कि समाज में अनमोल जैसे व्यक्ति किन्नर की परम्परागत अवधारणा के विपरीत जाकर बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिए प्रयास करते हैं। किन्नर समाज दो वक्त की रोटी के लिए समूह में निवास करता है और भीख मांगकर अपनी आजीविका की व्यवस्था करता है। इसके बावजूद अपने समुदाय में शामिल बच्चों के हितों का ध्यान देते हैं। वह उनके प्रति समाज से उचित व्यवहार की उम्मीद रखते हैं। साथ ही शिक्षा और रोजगार प्राप्त कर समाज में अपनी पहचान को सुदृढ़ करने में उनका सहयोग करते हैं। ताकि उनकी स्थितियों में सुधार हो सके। किन्नर समाज की यह सोच नहीं है कि वह ऐसे बच्चों को लाकर उनसे भीख मंगवाए। बल्कि वह चाहता है कि उनकी तरह नवजात शिशु या बच्चे समाज में उपेक्षा का शिकार न हों। जब किन्नर समुदाय देखता है कि ऐसे बच्चे अपने घर में सुरक्षित और खुश हैं, तो वे उनके अच्छे भविष्य की कामना करते हैं। यह कस्तूरी की इस भावना से

प्रकट होता - “कोनो बात नाही, तुम वही रहो। बढ़िया पढो लिखो नौकरी करो। यहां की जिन्दगी बहुत अच्छी नहीं है।”¹¹ यह उपन्यास जीवनभर संघर्षरत उन इंसानों का दस्तावेज है, जिनके प्रति समाज की दोहरी मानसिकता दिखाई पड़ती है। जहां एक तरफ मुख्यधारा का समाज पुत्र जन्म पर इन किन्नरों की दुआएँ और बलाएँ लेता है। वहीं दूसरी तरफ यही समाज उन्हें अपमानित, उपेक्षित और सामाजिक गतिविधियों से बहिष्कृत मानता है।

लेखक हर्षा के माध्यम से किन्नर वर्ग की समस्याओं और जटिलताओं को उनकी हंसी में छिपे दर्द को बड़ी संवेदना के साथ पाठक के सामने रखने का प्रयास करता है। उनकी ऐसी पीड़ाओं को, जो जीवनपर्यन्त चलते रहती हैं, ठीक हर्षा के जीवन की तरह है। जिसे लेखक अपने उपन्यास के जरिए मुख्य समाज के सामने लाने का प्रयास करता है। उपन्यास का मार्मिक पक्ष है, जब हर्षिता की डायरी मिलती है, जिसमें हर एक शब्द में हर्षा की विवशता, बेचैनी तथा उसकी भावनाओं का उतार चढ़ाव लिखा मिलता है। ऐसे बच्चों के जन्म लेते ही यह बात परेशान करती है कि वह स्त्रीलिंग या पुल्लिंग का प्रयोग करें। अतीत को झांककर देखें, तो समाज किन्नर वर्ग के प्रति असंवेदनशील है। यह कहानी मानवीय संवेदनाओं और मूल्यों पर प्रश्न उठाती है। हर्षा को बचपन से पिता के संबल के स्थान पर दुर्व्यवहार मिलता है। उसे अहसास दिलाया जाता है कि वह सबसे अलग है। वह इस अकेलेपन और उपेक्षित व्यवहार से त्रस्त होकर परिवार छोड़ देता है और हिजड़ा समुदाय में शामिल हो जाता है। समुदाय में शामिल होने पर भी जिन्दगी के उतार चढ़ाव में डूबते उतरते अंत में स्वयं की इहलीला समाप्त कर लेती है।

किन्नर वर्ग सदियों से अपने पहचान के लिए संघर्षरत है। आज उनके प्रति लोगों की धारणा में परिवर्तन हो रहे हैं। इस उपन्यास में किन्नर समाज के प्रति संवेदनशील वर्ग की बदलती मानसिकता का परिचय भी मिलता है। यह सूर्या और हर्षा के जीवन की तुलना से देखा जा सकता है। सूर्या और हर्षा दोनों ही किन्नर हैं, सूर्या शिक्षा प्राप्त कर समाज में अपनी खुद की पहचान बनाने की कोशिश करता है। इस कोशिश में पिताजी का पूर्ण मार्गदर्शन व सबल सहयोग

प्राप्त है, जिससे वह कामयाब होता है। परंतु हर्षा की स्थिति ठीक विपरीत है। वह बचपन से अकेलेपन और हीनभावना से ग्रस्त है। वह परिवार से विस्थापित होने को मजबूर हो जाता है। वह किन्नर समाज में शामिल होने के लिए विवश हो जाता है। जहाँ उसे हर समय परिवार की आवश्यकता महसूस होती है। बहुत दिनों बाद भी प्रतिष्ठित समाज उसको समझने की कोशिश भी नहीं करता है। वह बार-बार चिन्तित हो जाता है कि उसकी गलती क्या है? यही कि एक अंग अविकसित है। बस इतनी सी! शायद इस तथाकथित समाज में सारा फसाद सिर्फ इसी अंग को लेकर होते हैं। लड़ाई-झगड़ा, प्रेम, मारपीट, मान-अपमान, बलात्कार आदि सब इसी वजह से हैं। दोनों पात्रों के माध्यम से लेखक ने अपनी कथा को मार्मिक बनाया है। उनकी इस कुशलता के विषय में समीक्षक लिखते हैं कि- “हर्षा के जीवन के कुरूपताओं के समान्तर एक कथा अनमोल, उसकी पत्नी आशिका उसकी प्रेमिका अनाया और पुत्र किन्नर सूर्या की चलती रहती है। बड़े करीने से, लेखक ने मानसिक कुरूपता बनाम शारीरिक कुरूपता की समानान्तरता गढ़ा है।”¹²

हर्षा के सामने भविष्य का अंधकार मडराता है। स्कूल से लेकर घर-बाहर हर कोई मजाक उड़ाता है। गाहे-बगाहे लोग उसे हिजड़ा कहने से नहीं चूकते हैं। खेलने कूदने में पढ़ते वक्त और यहां तक कि स्कूल का फार्म भरते वक्त एक अलग ही कॉलम होता है। पुरुष महिला या अन्य। हर वक्त यह एहसास दिलाया जाता है कि ये समाज से अलग हैं। समाज से तिरस्कृत और बहिष्कृत हैं। इसका उदाहरण हर्षा है। जो जीवन की त्रासदी से जूझते हुए किन्नर समाज में शामिल होकर जिन्दगी जीने की जददोजहद करती है- “और वह हर्षा से हर्षिता बन जाती है।” शायद ये उसकी पहचान बनाने की पहली सीढ़ी थी।

“हर्षा से हर्षिता बनना मेरे लिए मजबूरी और जरूरतें दोनों थीं। हर्षा की काया में छटपटाहट होती थी मगर कोई नहीं था जो उसे समझ सकता। परिवार वाले भी नहीं। अम्मा चाहकर भी कुछ नहीं कर सकती थी। कुछ भी नहीं। आखिर इस उहापोह से निकलकर अन्ततः हर्षिता के अस्तित्व में मैं आ ही गई।”¹³

हर्षिता अपने अपूर्ण जीवन में परिवार को तलाशती है। रिश्तों की धड़कनों को महसूस करती है। अपने पिताजी के इज्जत की परवाह कर उन्हें मसीबतों से छुटकारा दिलाने की ठान लेती है, और रुपयों का इंतजाम करती है। जबकि दूसरी तरफ अनमोल अच्छी कमाई करने के बाद भी पिता की भावनाओं को समझ नहीं पाता, जिस बच्चे के जन्म लेते ही पिता द्वारा हत्या करने का प्रयास किया जाता है। उन्हें तृतीय लिंग सम्बोधित कर समाज के हाशिये पर खड़ा किया जाता है। समाज में जन्म लेकर सामाजिक संबंधों से अलग होने का दर्द दिया जाता है। वही हर्षिता अपने पिताजी के स्वाभिमान के लिए स्वयं को उस अंधेरे रास्ते में ले जाती है। जहां जिन्दगी कलंक, बनकर डस लेती है। अपना जीवन को दांव में लगाकर हर्षिता पिताजी के खेत को छुड़वाती है। और अंत में दुर्भाग्य का पीड़ा लेकर मौत को गले लगाकर इस संसार से छुटकारा पा लेती है।

कहा जा सकता है। भगवंत अनमोल का उपन्यास 'जिन्दगी 50-50' किन्नरों की त्रासदपूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति है। लेखक के स्वयं के जीवन पर आधारित यह कहानी समाज में किन्नर वर्गों की दुर्भाग्यपूर्ण जीवन को मार्मिकता के साथ उजागर करती है। उपन्यास का उद्देश्य यह भी है कि किन्नर समुदाय को यह आजादी दी जाए कि वे अपने इच्छानुसार कार्य चुन सकें। जिससे उनकी पहचान हो और समाज में भी प्रगति आए। साथ ही समाज की मुख्यधारा में इन्हें सम्मिलित किया जाए। उपन्यास का यह कथानक किन्नर वर्ग के प्रति हमारी सहानुभूति और हमारी जिम्मेदारी को जागृत करने की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण साबित होता है। यदि समाज किन्नर वर्ग के प्रति सकारात्मक और संवेदनशील हो तो जल्द ही यह समुदाय एक अंग के न होने की पीड़ा से आजाद हो जाएगा।

निष्कर्ष रूप से देखें तो इस उपन्यास में किन्नरों के सन्दर्भ में संस्कार, परिवार और समाज में उपेक्षित स्थान, आय के संसाधनों का अनिश्चितता आदि से सम्बन्धित अनेक प्रश्न उठाए गए हैं। इसमें समाज से यह अपेक्षा भी की जाती है कि उन्हें समाज में यथोचित स्थान मिले, जिससे उनका उद्धार हो सके। इस तरह भगवंत अनमोल का उपन्यास 'जिन्दगी 50-50' किन्नर वर्ग के सामान्य जीवनयापन तथा इंसान समझे जाने की गुजारिश करता है। यह कृति पाठकों के

लिए आधा अधूरा नहीं बल्कि पूरी तरह से सफल है। यह उपन्यास 'हम बदलेगें, जग बदलेगा' की यथार्थता को प्रकट करने में पूर्णता सफल है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. जायसवाल, कविश्री (डॉ.), ज़िन्दगी 50-50: एक मूल्यांकन, संपादक- एम. फ़ीरोज़ खान (डॉ), थर्ड जेण्डर और ज़िन्दगी 50-50, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-55
2. भगवंत, अनमोल, जिंदगी 50-50, राजपाल एण्ड संस, प्रथम संस्करण, 2017, पृष्ठ संख्या- 28
3. वही, पृष्ठ संख्या-53
4. वही, पृष्ठ संख्या-34
5. वही, पृष्ठ संख्या-35
6. वही, पृष्ठ संख्या-37
7. वही, पृष्ठ संख्या-56
8. वही, पृष्ठ संख्या-58
9. वही, पृष्ठ संख्या-77
10. वही, पृष्ठ संख्या-138
11. वही, पृष्ठ संख्या-139
12. सिंह, राधेश्याम (डॉ.), टीस पर महरम- जिन्दगी 50-50, संपादक- एम. फ़ीरोज़ खान (डॉ), थर्ड जेण्डर और ज़िन्दगी 50-50, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या- 62
13. भगवंत, अनमोल, जिंदगी 50-50, उपरोक्त, पृष्ठ संख्या- 163